कलिंगाधिपति महामेघवाहन खारवेल

डॉ. लता बोथरा

जैन विद्या शोध संस्थान
जैन भवन
पी-25, कलाकार स्ट्रीट
कोलकाता - 700 007

प्रकाशक :
जैन भवन
पी-25, कलाकार स्ट्रीट
कोलकाता - 700 007
दूरभाष : 033 22682655
E-mail: jainbhawan@rediffmail.com
jainbhawan17@gmail.com
Web : www.jainbhawan.in

आर्थिक सहयोग :
PRIME & SHINE TRADING PVT. LTD.
NIVESH INVEST SINGAPORE PTE LTD.
USTAR DIAMONO SHANGHAI LTD.

दिसम्बर : 2017

ISBN No : 978-93-83621-00-4

मुद्रक :
राज प्रोसेस प्रिन्टर्स
8, ब्रजदुलाल स्ट्रीट
कोलकाता - 700 006

अहिंसा के उपासक महामेघवाहन राजा खारवेल

भारतीय संस्कृति का एक तेजस्वी नक्षत्र किन्तु अल्पज्ञात राजा खारवेल का जीवन चरित्र वर्तमान एवं भावी पीढ़ी को निश्चित ही प्रेरणा देता रहेगा। कई सदियों तक खुद भारत की जनता एवं इतिहासवेत्ताओं को खारवेल के विषय में कुछ भी पता नहीं था। केवल अशोक का नाम ही सर्वत्र सुप्रसिद्ध था। विदेशी इतिहासकारों को भी इस नाम के किसी राजा के विषय में कोई जानकारी नही थी। कुछ जैन ग्रंथों में खारवेल का नाम अवश्य आता था किन्तु इतिहासकारों ने जैन ग्रंथों को इतिहास लेखन में विशेष महत्त्व नहीं दिया था अतः इस नाम को कपोल कल्पित मानकर छोड़ दिया जाता रहा। कहीं-कहीं इस प्रकार के उल्लेख को बौद्ध अनुयायी के रूप में घोषित कर दिया गया। अतः हमेशा इस विषय पर बादल छाए रहे।

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में ओड़िसा के खंडगिरि एवं उदयगिरि की हाथीगुम्फा में उत्कीर्ण लेखों को पढ़ा गया और एक भव्य इतिहास पर से परदा हट गया। ब्राह्मीलिपि में उत्कीर्ण लेखों में महामेघवाहन राजा खारवेल के जीवन की महत्त्वपूर्ण घटनाओं का वर्णन प्राप्त हुआ। साथ ही खारवेल की शौर्य गाथा, जीवदया, धर्मप्रेम एवं प्रजा वात्सल्य का अद्‌भुत चरित्र भी ज्ञात हुआ है । इससे भारतीय संस्कृति के इस महान

राजा के जीवन की घटनाओं की जानकारी प्राप्त हुई। जो भारतवर्ष के इतिहास को गौरव प्रदान करती है।

अद्यावधि इस विषय में कुछ कुछ संशोधन हुआ है किन्तु कुछ अधिक अध्ययन अपेक्षित है। इस दिशा में पूर्व देश की विदुषी डॉ. लता बोथरा ने सविशेष परिश्रम करके इस महान चरित्र का परिचय कराने का एक बहुत बड़ा काम किया है। हेमवंत स्थविरावली, राजतरंगिणी एवं उदयगिरि के अभिलेखों के आधार पर चरित्र को आधारभूत तथ्यों से पुष्ट किया है। परिणामस्वरूप चरित्र केवल कपोल कल्पित न रहकर एक प्रमाणभूत चरित्र बना है। राजा खारवेल का राजधर्म अन्य किसी भी राजा के आचार से अधिक दैदिप्यमान है। राज्यकार्य करते हुए धर्म का आचरण एवं भारत के प्राण स्वरूप अहिंसा का आचरण तो किसी भी राजा के लिए आदर्श बन सकता है। अहिंसा के आचरण में राजा खारवेल शीर्षस्थ ही रहे हैं। उनका चरित्र वर्तमान हिंसात्मक जीवन शैली एवं शासन व्यवस्था के लिए आदर्श मार्गदर्शक बन सकता है। यह जैनियों का कर्त्तव्य है कि ऐसे महान राजाओं का चरित्र जन-जन तक पहुँचाये और जैनधर्म तथा भारतीय संस्कृति का जयकार करावें। मैं डॉ. लता बोथरा जी को धन्यवाद प्रदान करता हूँ एवं आशा करता हूँ कि प्रत्येक जैन इस चरित्र का निरन्तर पाठ करता रहे।

डॉ. जीतेन्द्र बी. शाह
निर्देशक- एल.डी. इन्स्टीट्यूट ऑफ इंडोलॉजी,
अहमदाबाद

लेखिका की कलम से-

किसी भी व्यक्ति, परिवार, समाज और राष्ट्र का गौरव उसका प्राचीन इतिहास होता है। लगभग पाँच हजार वर्षों से भारतीय ऐतिहासिक संस्कृति को नष्ट करने का जो षडयन्त्र चल रहा है उसका प्रत्यक्ष प्रमाण हमें कलिंग सम्राट महामेघवाहन खारवेल के विषय में अनुसंधान करने पर मिला। यदि हाथीगुंफा शिलालेख नहीं मिलते तो इस महान सम्राट का नाम इतिहास के अँधेरों में खो जाता। आज भी भारत में जो इतिहास स्कूलों और कॉलेजों में पढ़ाया जाता है उसमें खारवेल के विषय में कोई उल्लेख नहीं है। ज्यादातर भारतवासी इस महान सम्राट के नाम से अपरिचित हैं। क्या कारण है और क्यों? जैन इतिहास की नींव को कमजोर करने का प्रयास पाँच हजार वर्षों से चल रहा है इसी कारण खारवेल जैसे महान सम्राट को इतिहास में कोई स्थान नहीं दिया गया। टेलीविजन के ऐतिहासिक सीरियल भारतीय संस्कृति पर कुठाराघात करते हैं और हम मूक बने देखते हैं क्योंकि हमें अपने ऐतिहासिक गौरव के विषय में पता ही नहीं। पाश्चात्य प्रभाव के कारण वर्तमान पीढ़ी अपने गौरवशाली अतीत में झांकना ही नहीं चाहती। आज की शिक्षा प्रणाली जो अंग्रेजी प्रभाव से ग्रसित है

उसके कारण विद्यार्थियों को अपने राष्ट्र के प्राचीन इतिहास के प्रति रुचि बहुत कम ही देखने को मिलती है। ये बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है। जब टी. वी. सीरियलों में ऐतिहासिक कथाओं का फिल्मांकन दिखाकर चन्द्रगुप्त मौर्य और अशोका जैसे महान सम्राटों का चरित्र हनन किया गया है तो यह किस षड़यन्त्र के तहत् हो रहा है यह भी साधारण लोगों को अज्ञानतावश पता ही नहीं चल पाता। खारवेल के विषय में उनके शिलालेखों से जिनमें उनके राज्यकाल का तेरह वर्षों का इतिहास मिलता है, कल्हण की राजतरंगिनी में उसके बाद के शासन के चौंतीस वर्षों का इतिहास मिलता है, इसके अलावा जैन हिमवंत पट्टावली जो लगभग चार सौ ईस्वी सन की है उसमें उनके विषय में, उनके वंश के विषय में, उनकी विजयों के बारे में, तथा उनके धार्मिक कार्यों का विवरण मिलता है। इन तीनों के तुलनात्मक अध्ययन से ये स्पष्ट हो जाता है कि ये तीनों एक ही व्यक्ति के चरित्र को परिलक्षित करते हैं।

जैन धर्म से अपरिचित इतिहासकारों ने राजतरंगिनी में जहाँ भी जिन शब्द मिला है अज्ञानतावश उसकी व्याख्या बुद्ध से की है जबकि उसमें जैनों के लिए जिन और बौद्धों के लिए बुद्ध का अलग-अलग व्यवहार किया गया है। ऐसी भूलें भी इतिहास को विपरीत मोड़ दे देती है तथा तथ्यों को नष्ट करने में सहायक बनती हैं। इससे जो विभ्रान्ति फैलती

है उसका जिम्मेदार कौन? यह एक ऐसा महत्वपूर्ण प्रश्न है जिसका उत्तर हमें खोजना होगा। मेरी आग्रह एवं विनती है जैन सन्तों और साध्वियों तथा समाज के प्रबुद्ध लोगों से कि वे इस क्षेत्र में संशोधन के कार्य करें और तथ्यों के सही प्रकाशन में इतिहास का पुनः मूल्यांकन कर सही इतिहास का सृजन करें। मेरी यह रचना कलिंगाधिपति महामेघवाहन खारवेल इसी दिशा में एक प्रयास है। इस महान सम्राट का यदि सही मूल्यांकन किया जाय तो यह अशोका से भी महान सम्राट था जिसने तीर्थंकरों की वाणी को उसकी पराकाष्ठा तक पहुँचाया और पूरे भारत में उत्तरापथ काश्मीर से दक्षिणापथ श्रीलंका तक जीव हत्या निषेध कर दी। ऐसा सम्राट जो देवी के आगे बलि देने वाले ब्राह्मण पुत्र की रक्षा के लिए स्वयं अपनी बलि देने के लिए प्रस्तुत हो जाये उसके कार्यों की अनुमोदना शब्दों में नहीं की जा सकती। सम्राट महामेघवान खारवेल भारत की आदि संस्कृति के विरासत के एक ऐसे चमकते नक्षत्र हैं जिनकी रोशनी कभी भी धूमिल न हो ऐसा प्रयास किया जाना चाहिए।

कलिंगाधिपति महामेघवाहन खारवेल

मौर्यकाल तक श्रमण संस्कृति की ज्योति पूर्वी भारत में प्रज्वलित रही लेकिन अन्तिम मौर्य सम्राटों की दुर्बलता के कारण ऋषि पतंजलि के समय में पुष्यामित्र शुंग ने ब्राह्मण साम्राज्य की स्थापना की। उस समय श्रमणों और ब्राह्मणों का विरोध मुखर हो उठा था। पुष्यामित्र की इस घोषणा ने कि जो उसे श्रमण का कटा हुआ मस्तक देगा उसे मैं सौ दिनार दूंगा, साम्प्रदायिक विद्वेष की चरमसीमा को उजागर करता था। शायद इसीलिए पतंजलि के महाभाष्य में श्रमण और ब्राह्मणों में शाश्वत विरोध कहा गया है। यही नहीं जिन देशों में श्रमणों का प्राधान्य था जैसे अंग, बंग, कलिंग और मगध को पतित देश घोषित किया गया। इसी समय में सम्पादित मनु स्मृति में इन देशों में तीर्थ यात्रा करने एवं जाने पर प्रायश्चित का विधान किया गया। इसके साथ ही श्रमण तीर्थ स्थानों का ब्राह्मणीकरण भी किया गया। इस विरोध का मूल कारण क्या था?

वेद कालीन समाज ऋषभदेव के बाद का समाज है क्योंकि ऋषभ युग में अग्नि और कृषि का प्रारम्भ हुआ था। इसीलिए वेदों और पुराणों में ऋषभ का वर्णन उनके माता-पिता के नाम, त्याग और तपस्या का रूप जैन परम्परानुसार

ही मिलता है। यहाँ तक कि उनको विरोधी मानते हुए भी उन्हें शिव और विष्णु के अवतार के रूप में स्वीकार किया गया है। जैनियों ने उन्हें प्रथम तीर्थंकर माना है। उनकी साधना का रूप यज्ञ नहीं होकर तपस्या थी। उनके दिये उपदेश ही मूल वेद थे जिनके पठन-पाठन के लिये ब्राह्मण वर्ग बनाया गया था। मूल वेदों के विच्छिन्न होने के बाद महाभारत काल में उनका पुनः संकलन किया गया जिसमें अनेक परिवर्तन होने स्वाभाविक थे। इसलिए आज जो वेदों का स्वरूप हमारे पास है वह संकलित वेद का रूप है। साहित्य को लोकप्रिय बनाने के लिये उसे अलौकिक और अपौरुषेय कहा जाता है। यदि कोई शास्त्र नया होता है या किसी पुरुष द्वारा अमुक समय में रचित किया होता है उसकी महत्ता अलौकिक और अपौरुष शास्त्र की अपेक्षा कम आंकी जाती है। इसीलिए संकलित वेदों की महत्ता बढ़ाने के लिए उन्हें अपौरुषय कहा गया। मूल वेदों के रूप की झलक हमें बहुत कुछ उपनिषदों में देखने को मिलती है। संकलित वेदों के यज्ञ रूप का विरोध करते हुए उपनिषदों में स्पष्ट लिखा है **यज्ञ टूटी नाव के समान है जो इन यज्ञों में विश्वास रखते हैं वो बार-बार जनम-मरण प्राप्त करते रहते हैं।** (मुण्डकोपनिषद 1.2.7)।

एत्तरेय ब्राह्मण 8.11 में लिखा है **जिस प्रकार निषाद व लुटेरे धनिकों को जंगल में ले जाकर गड्ढे में फेंककर**

उनका धन लूट लेते हैं उसी प्रकार ऋत्विज व पुरोहित यजमानों को गड्ढे में फेंककर (यज्ञादि द्वारा) उनका धन लूट लेते हैं अर्थात् यज्ञादि द्वारा उनको आध्यात्मिक पतन की ओर ढकेल देते हैं। उपनिषद में क्षत्रियों के आध्यात्मिक विकास की परम्परा है। ये सही भी है कि उच्चकोटि की त्याग और तपस्या वही कर सकता है जिसके मन में निश्चय भाव प्रगाढ़ हो और प्राण जाये तो जाये पर निश्चय नहीं जाये इस बात पर दृढ़ हो। इसी दृष्टिकोण का प्रतिपादन प्राच्य भारत की सांस्कृतिक परम्परा में हुआ और इसका दर्शन उड़ीसा तथा काश्मीर के इतिहास में सम्राट मेघवाहन, खारवेल के चरित्र में हम करते हैं।

भारतवर्ष के इतिहास में उड़ीसा एक महत्वपूर्ण भौगोलिक खण्ड रहा है। यद्यपि आज इसका क्षेत्रफल उतना विशाल नहीं है जितना कि प्राचीन काल में था। प्राचीन काल में औड्रराष्ट्र, कलिंग, ककोद, उत्कल, दक्षिण कौशल और गंगराडी इन छः क्षेत्रों को मिलाकर उड़ीसा बना था। कभी ये एक राजा के अधीन रहे और कभी-कभी स्वाधीन। कलिंग तीन भागों में बंटा हुआ था। दक्षिण कलिंग, मध्य कलिंग और उत्तर कलिंग। उत्तर कलिंग को उत्कल भी कहते थे। पुराणों के आधार पर राजा सुद्योमन के तीन पुत्र थे। गया, उत्कल और विनीतास्व। पहले ये तीनों प्रदेश कलिंग में शामिल थे। इसी लिये कलिंग के राजाओं को त्रिकलिंगाधिपति

की उपाधि दी गई थी। यह किंवदन्ती है कि रामचन्द्रजी वन प्रस्थान के समय उत्कल गोदावरी होकर पंचवटी गये थे। महाभारत में भी कलिंग का वर्णन मिलता है। कौरवों और पांडवों के युद्ध में कलिंग की सेना ने कौरवों के पक्ष में बड़ी वीरता के साथ युद्ध किया था। प्राचीन पुराणों तथा मिस्र ग्रीक एवं चीनी यात्रियों के विवरण में भी उत्कल के सम्बन्ध में वर्णन मिलता है। जैन शास्त्रों में कलिंग को आर्य देश माना है। जबकि वैदिक साहित्य में कलिंग को अनार्य देशों की श्रेणी में रखा गया जिससे यह भी सिद्ध होता है कि प्राचीन कलिंग में जैन धर्म की जड़ अति गहरी थी।

उड़ीसा के साथ जैनधर्म का संपर्क अठारवें तीर्थंकर अरनाथ के समय से है। त्रिषष्टि-शलाका पुरुष चरित्र में कहा गया है कि दीक्षा लेने के बाद उन्होंने प्रथम भिक्षा राजपुर में ग्रहण की थी। महाभारत में राजपुर को कलिंग की राजधानी बताया गया है। तेइसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ का कलिंग देश से गहरा सम्बन्ध रहा है। खंडगिरि की गुफाओं के मूल नायक पार्श्वनाथ है। रानी गुफा की पार्श्ववेष्टनी भगवान पार्श्वनाथ के जीवन प्रसंगों को दर्शाती है। नगेन्द्र नाथ बसु ने भगवती सूत्र, क्षेत्र समास और भावदेव सूरि द्वारा लिखित चौबीस तीर्थंकरों की जीवनी पर आलोचना करते हुए लिखा है कि पार्श्वनाथ ने अंग, बंग और कलिंग में जैन धर्म का प्रचार किया था। ताम्रलिप्त बंदरगाह से

कलिंग की ओर प्रस्थान किया और कोप कटक में धन्य नामक गृहस्थ के घर से आहार ग्रहण किया था। वर्तमान में यह कोप कटक बालेश्वर जिले का कुपारी ग्राम है जो ई0 पूर्व आठवीं शताब्दी में कोपारक ग्राम के नाम से प्रचलित था। भगवान पार्श्वनाथ धन्य गृहस्थ के अतिथि बने थे इस स्मृति को जीवित रखने के लिये कोप कटक को धन्य कटक भी कहा जाने लगा। भावदेव सूरि के पार्श्वनाथ चरित्र में आया है कि कलिंग को यवनों के हाथों से मुक्त कराने के पश्चात् कुशस्थल की राजकुमारी प्रभावती के साथ पार्श्वनाथ का विवाह हुआ। रानी गुम्फा के एक अपहरण दृश्य को बहुत से लोग इसी घटना का चित्रण समझते हैं।

जैन कथा साहित्य में भी कलिंग राज्य का उल्लेख है। चित्रसेन और पद्मावती चरित्र में वर्णन है कि किसी समय कलिंग देश में बसन्तपुर नामक एक राज्य था। यहाँ के राजा थे वीरसेन। उनकी पत्नी का नाम था वनमाला और पुत्र का नाम था चित्रसेन। वीरसेन के मन्त्री का पुत्र रत्नसार चित्रसेन का परम मित्र था। इन दोनों का रूप कामदेव को भी लजाने वाला था। इन्हें देखकर बसन्तपुर की लड़कियाँ अपलक हो जाती थी। समय-बेसमय नगर की लड़कियाँ इन दोनों को देखने के लिए राजपथ पर खड़ी हो जाती। चित्रसेन और रत्नसार के इस अनिन्द्य रूप ने जनसाधारण को ईर्ष्यालु बना दिया, अतः प्रजागण हिंसा

की दूषित दृष्टि से इन दोनों कुमारों के चरित्र को कलुषित करने लगे। अन्ततः उन लोगों ने संघबद्ध रूप से बसन्तपुर के राजा को इन्हें निर्वासित करने के लिये बाध्य कर दिया।

झूठे कलंक को सिर पर लिए दोनों मित्र निर्वासित हो गए और एक गहन जंगल में जाकर आश्रय लिया। इसी जंगल में एक रात्रि जब चित्रसेन सो रहा था रत्नसार ने दूर से आता हुआ कोलाहल सुना। उसने चित्रसेन को जगाया। फिर दोनों मित्र जिस ओर से कोलाहल सुनायी पड़ रहा था उसी ओर चले।

कुछ देर पश्चात् दोनों एक मन्दिर में पहुँचे। मंदिर में भगवान शान्तिनाथ की एक मूर्ति विराजमान थी। वहाँ स्वर्गवासी किन्नर-किन्नरियाँ उत्सव कर रही थी। किन्नरियों का नृत्य देखकर दोनों मित्र मुग्ध हो गये थे तभी मन्दिर की दीवार पर एक असाधारण सुन्दर स्त्री की पाषाण मूर्त्ति देखी। नारी देह में इतना रूप उन्होंने कहीं नहीं देखा था। अतः राजपुत्र चित्रसेन ने तय किया कि किसी भी प्रकार से वह इस असामान्य सुन्दरी से विवाह करेगा।

इस सुन्दर नारी का नाम था पद्मावती। पद्मावती पुरुषों से घृणा करती थी। एक शिल्पी ने उससे विवाह करना चाहा था किन्तु पद्मावती तो किसी भी पुरुष से विवाह करने को तैयार नहीं थी। उस रचनाकार के हृदय में पद्मावती की जो रूप राशि प्रविष्ट हो गयी थी उसी से उस प्रेमी शिल्पी ने इस मूर्ति की रचना की थी।

यहाँ चित्रसेन ने अपनी और पद्मावती की पूर्व जन्म की कहानी सुनी। पूर्व जन्म में उसने हंस रूप में जन्म ग्रहण किया था और यह पद्मावती थी उसकी प्रेमिका हंसिनी। ये दोनों एक सरोवर में रहते थे।

एक दिन वहाँ एक सौदागर विश्राम करने आया। वह जिन भक्त था। वह जिनपूजा करने के पश्चात् सबको अन्न दानकर तब स्वयं अन्न ग्रहण करता है। हंस और हंसिनी रूपी चित्रसेन और पद्मावती ने इस पुण्य कार्य की खूब प्रशंसा की। इसी पुण्य के फलस्वरूप हंस ने चित्रसेन के रूप में एवं हंसिनी ने पद्मावती के रूप में जन्म ग्रहण किया।

राजपुत्र चित्रसेन तत्काल वहाँ से लौट गए और पद्मावती को खोजने लगे। कुछ ही दिनों में उनकी मुलाकात पद्मावती से हो गयी। अब चित्रसेन ने पद्मावती से अपने मन की बात कही।

पद्मावती बोली— नहीं, मुझे पुरुषों से घृणा है।

तुम पूर्व जन्म में जिस पुरुष से प्रेम करती थी उससे भी तुम घृणा करती हो?— चित्रसेन ने जानना चाहा।

वह पुरुष कहाँ है? प्रश्न किया पद्मावती ने।

तुम्हारे सन्मुख। आँखें खोलकर देखो, देख पाओगी- जबाव दिया चित्रसेन ने।

तदुपरान्त उसने पद्मावती को पूर्व भव सुनाया। तब

पद्मावती ने उसे गौर से देखा। पुरुषों में इतना रूप उसने कभी नहीं देखा था।

चित्रसेन के रूप को देखकर पद्मावती मुग्ध हो गयी। उसके मन से पुरुष-द्वेष दूर हो गया और चित्रसेन तथा पद्मावती विवाह बंधन में बँध गये।

उसी समय बसन्तपुर में भगवान महावीर का आगमन हुआ। राजा वीरसेन उनके उपदेश से मुग्ध होकर पुत्र चित्रसेन को लौटा लाए एवं उसे बसन्तपुर का राजा बनाकर स्वयं दीक्षित हो गए। इसके पश्चात् पद्मावती के एक पुत्र हुआ।

इस प्रकार भगवान महावीर के समय में भी कलिंग के तार मगध से जुड़ते हैं। जैन हरिभद्रियवृत्ति के अनुसार कलिंग के शासक महावीर के पिता के मित्र थे जिन्होंने महावीर को उनके धर्म के उपदेश हेतु आमंत्रित किया था। हरिवंश में भी महावीर की कलिंग यात्रा की पुष्टि होती है तथा आवश्यक सूत्र में तोषाली और मोषाली में उनके द्वारा उपदेश देने की पुष्टि होती है। जैनग्रंथों के अनुसार प्राचीनकाल में तोषाली ने अनेकों जैनधर्म उपदेशकों को आकर्षित किया था तथा वहाँ एक जैनमूर्ति है जिसे तोषालिक राजा की निगरानी में स्थापित किया गया था।

करकण्डुचरिउ करकण्डुराजा के जीवन का आश्चर्यजनक विवरण देता है। वह पार्श्वनाथ के बाद और

महावीर के पूर्व कलिंग के राजा थे एवं पार्श्वनाथ की परम्परा के अनुयायी। उत्तराध्ययन सूत्र के अठारहवें अध्याय में इनका विवरण है। इस विवरण से जाना जाता है कि जब वह कलिंग में राज्य करते थे तब पांचाल में द्विमुख, विदेह में नमि और गान्धार में नग्गई राज्य करते थे। वहीं यह भी कहा गया है कि इन राजाओं ने स्वपुत्रों को राज्य देकर श्रमण दीक्षा ग्रहण कर ली थी। बौद्ध कुम्भकार जातक में करकण्डु को प्रत्येक बुद्ध के रूप में स्वीकार किया गया है और उसकी राजधानी दण्डपुर बतायी गयी है। इन समस्त कारणों से यह ज्ञात होता है कि ऐतिहासिक युग में कलिंग में जैन धर्म का प्रवर्तन भगवान पार्श्वनाथ ने किया था। प्राचीन काल में कलिंग में जैन धर्म प्रचलित था यह महाभारत के इस कथन से भी समर्थित होता है कि **अनार्य कलिंग वासियों से दूर रहो कारण वे न वेद मानते हैं न यज्ञ, यहाँ तक कि देवता भी उनके हाथों से बलि ग्रहण नहीं करते।** बौधायन धर्मसूत्र में भी कलिंग को अनार्य देश कहकर अभिहित किया गया है।

उत्तराध्ययन सूत्र में कहा गया है कि चम्पानगरी में पालित नामक एक वणिक रहता था। वह भगवान महावीर का शिष्य था। वह श्रावक रूप में निर्ग्रन्थ धर्म का ज्ञाता था। एक बार वह वाणिज्य के लिए जहाज द्वारा पिथुण्ड नगरी में गया था। इसी पिथुण्ड का उल्लेख खारवेल की हाथी गुम्फा के शिलालेख में भी जैन तीर्थ के रूप में किया गया है।

नन्द राजाओं के समय कलिंग मगध साम्राज्य के अन्तर्गत था। हाथी गुम्फा लेख की छठी और बारहवीं पंक्ति में दो बार नन्द राजाओं का उल्लेख हुआ है। ये नन्द राजा कौन थे इसे लेकर विद्वानों में पार्थक्य होने पर भी सम्भवतः वे पुराणों में उल्लेखित कलिंग विजेता सर्वक्षत्रान्तक महापद्म नन्द थे। कलिंग को पराजित कर वे विजय स्मारक के रूप में कलिंग जिन को मगध ले गए थे। कलिंग जिन कौन थे इस पर भी विद्वानों के विभिन्न मत है। नन्दराजा का कलिंग जिन को मगध ले जाना और खारवेल के समय तक उसे नष्ट न कर उपासना करने से यह प्रतीत होता है कि नन्दराज भी जैनधर्मावलम्बी थे।

इस कलिंग जिन के संदर्भ में उड़ीसा के प्रसिद्ध इतिहासकार श्री नीलकंठ दास ने लिखा है कि उड़ीसा के संबलपुर स्थान में सर्वप्रथम गौतम बुद्ध ने जगन्नाथ को प्रतिष्ठित किया था और जगन्नाथ चरित्र की भी रचना की थी। खारवेल के शिलालेखों में जिस कलिंग जिन प्रतिमा का उल्लेख मिलता है वह यही थी जिसे नन्द राजा कलिंग जीतकर मगध ले गये थे। खारवेल ने पुनः मगध को जीतकर कलिंग जिन को वापस कलिंग में लाकर पुनः प्रतिष्ठित किया। सम्राट खारवेल का शिलालेख एक ऐसा प्रमाण है जिससे ऐतिहासिक तथ्यों पर प्रकाश पड़ता है। भगवान महावीर के करीब सौ वर्ष के अन्दर मगध में नन्दों

के राज्य की स्थापना हुई थी। उनके समय मगध विशाल और अत्यन्त शक्तिशाली साम्राज्य था। अतः निश्चित रूप से यह मूर्ति नन्दों से पूर्व की होगी और इसकी प्रतिष्ठा गौतम बुद्ध के बजाय गणधर गौतम स्वामी द्वारा होना ज्यादा प्रामाणिक लगता है। यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होनी चाहिए कि गौतम स्वामी ने कलिंग जिन को प्रतिष्ठित किया था। उस समय यह सम्बलपुर बहुत ही प्रसिद्ध क्षेत्र था यहाँ पाया जाने वाला हीरा विश्व विख्यात था। तब से अंग्रेजों के समय तक यह क्षेत्र हीराखण्ड के रूप में प्रसिद्ध हुआ। जगन्नाथ से सम्बन्धित जितने भी तथ्य हमें मिले हैं वे हमें उसके जिन मूर्ति होने के प्रमाण हैं तथा ये जिन मूर्ति ऋषभदेव स्वामी की थी जो बाद में जगन्नाथ के रूप में प्रसिद्ध हुई।

सातवीं शताब्दी में शैव वाहिनियों द्वारा जैनियों और बौद्धों पर अत्याचार किये गये तब यहाँ से लोगों ने तिब्बत आदि स्थानों पर पलायन किया और जब वहाँ पर भरत द्वारा बनाये गये मूर्तियों और मंदिरों को देखा तो उस क्षेत्र को उन्होंने सम्बल नाम दे दिया। गणधर गौतम स्वामी ने भी अष्टापद की यात्रा की थी। सम्बल को अंग्रेजी में संभाला कहते हैं इसका अर्थ है शांति की जगह। जहाँ भगवान विराजमान है इससे अधिक पवित्र और कोई जगह हो ही नहीं सकती। फलस्वरूप अष्टापद नाम लुप्त हो गया

और संभाला नाम प्रसिद्ध हो गया। बौद्ध ग्रन्थों में संभाला एक रहस्यमय घाटी है जिसकी खोज ने यूरोपीय जगत में हलचल मचा दी थी। 2600 वर्ष पूर्व यहीं पर गौतम स्वामी का अष्टापद जाने का वर्णन जैन साहित्य में हमें मिलता है।

चन्द्रगुप्त मौर्य जैन थे। उनका साम्राज्य बहुविस्तृत होने पर भी कलिंग उसके अन्तर्गत नहीं था। नन्दवंश के दुर्बल हो जाने पर लगता है कलिंगवासी पुनः स्वाधीन हो गए। चन्द्रगुप्त के पौत्र अशोक ने कलिंग जय किया। वह युद्ध कितना भयानक हुआ था यह अशोक के तेरहवें शिलालेख में लिखा है। जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति में सम्प्रतिकालीन कलिंग का उल्लेख है। कलिंग उन्हीं साढ़े पच्चीस आर्य देशों के अन्तर्गत था जहाँ जैन साधु बिना किसी बाधा के विचरण कर सकते थे।

कलिंगाधिपति महाराजा खारवेल का नाम सिर्फ कलिंग के इतिहास में ही नहीं बल्कि भारतीय इतिहास में भी स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाना चाहिए। महाराजा खारवेल ने न केवल कलिंग को भारत में एक महत्वपूर्ण साम्राज्य के रूप में स्थापित किया बल्कि जैन संस्कृति के विकास में भी अमूल्य योगदान दिया। अबतक चले आ रहे मगध साम्राज्य के प्रभुत्व को उन्होंने समाप्त कर दिया। मगध पति पुश्यामित्र शुंग जिसने श्रमणों पर घोर अत्याचार किया अनेक मंदिरों, चैत्यों को नष्ट या परिवर्तित किया था उस पर दो बार

आक्रमण कर उसे दण्डित एवं पराजित किया। खारवेल का परिचय हमें उदयगिरि के हाथी गुम्फा शिलालेख के अलावा हेमवंत पट्टावली (थेरावली) से भी मिलता है। जिसमें कलिंग के इतिहास की जानकारी दी हुई है। इस पट्टावली के रचनाकार आचार्य हेमवंत सूरि थे जो माथुरी वाचना के कर्त्ता आचार्य स्कन्दिलसूरि के शिष्य एवं पट्टधर थे। इनका समय ई0 सन् चौथी शताब्दी का माना जाता है। महामेघवाहन खारवेल के शिलालेख से खारवेल के वंश का थोड़ा ही परिचय मिलता है परन्तु इस थेरावली में उनके वंश का विस्तृत परिचय हमें मिलता है।

हाथीगुंफा वाला खारवेल का शिलालेख उड़ीसा प्रदेश के भुवनेश्वर तीर्थ के निकटस्थ कुमारगिरि (उदयगिरी) की एक चौड़ी गुफा के ऊपर खुदा हुआ है। उड़ीसा में प्राचीन समय से जैन धर्म की प्रतिष्ठा एवं सम्राट खारवेल का जिनधर्मी होने की पुष्टि सर्वप्रथम इस शिलालेख द्वारा स्थापित हुई। हिमवन्त स्थविरावली में कलिंगपति खारवेल के सम्बन्ध में जो उल्लेख हैं, उनसे हाथीगुंफा के शिलालेख में उपलब्ध कतिपय विवरणों की न केवल पुष्टि ही होती है अपितु शिलालेख में उत्कीर्ण दो तीन तथ्यों पर भी विशिष्ट प्रकाश पड़ता है।

(1) हाथीगुंफा के शिलालेख में खारवेल के वंश का परिचय देते हुए लिखा है :–

चेतराजवसवधनेन– अर्थात् चेत वंश का वर्धन करने

वाले ने। शिलालेख के इस वाक्य के आधार पर अनेक विद्वान् कलिंगपति खारवेल को चेदि वंश का, तो कुछ विद्वान् चैत्रवंश का मानते हैं। लेकिन—

हिमवंत स्थविरावली में खारवेल को चेटवंशीय बताते हुए लिखा है कि कूणिक के साथ युद्ध में हारने के बाद चेटक ने संलेखना लेकर अपना प्राण त्याग दिया। उनका एक पुत्र शोभन राय अपने श्वसुर राजा सुलोचन की शरण में चला गया। राजा सुलोचन के कोई पुत्र न होने के कारण उनके बाद शोभनराय कलिंग की गद्दी पर आसीन हुए। इसी शोभनराय की पाँचवीं पीढ़ी में चंडराय के शासन में मगध के नंद राजा ने कलिंग पर आक्रमण कर वहाँ से जिन मूर्ति को मगध में ले जाकर स्थापित किया। शोभनराय की आठवीं पीढ़ी में खेमराज हुए जिनके समय में अशोक ने कलिंग पर आक्रमण कर नर संहार किया था। क्षेमराज के पुत्र बुड्ढराज ने कुमारगिरि और कुमारीगिरि नाम के पर्वतों पर ग्यारह गुफाओं का निर्माण कराया था। इन्हीं बुड्ढराय के पुत्र भिक्खूराय कलिंग के शासक हुए जो आगे जाकर महामेघवाहन खारवेल के नाम से प्रसिद्ध हुए। बुड्ढराजा का नाम हमें हाथीगुम्फा शिलालेख में भी मिलता है। इस प्रकार हिमवंत पट्टावली में खारवेल का वंश राजा चेटक के पुत्र शोभनराय से प्रारम्भ होता है जिसकी पुष्टि खारवेल के शिलालेख से होती है।

चेटक के पुत्र शोभनराय के दसवीं पीढ़ी में खारवेल

हुए थे। इस प्रकार खारवेल के शिलालेख में विद्यमान **चेतराजवसवधनेन** नामक संदिग्ध वाक्यांश को हिमवन्त स्थविरावली में पूर्णतः स्पष्ट कर दिया गया है।

हिमवंत पट्टावली- जैनपट्टावलियों में यह हिमवन्त पट्टावली सबसे प्राचीन पट्टावली है। इसके रचयिता आचार्य हेमवन्तसूरि हैं। उनका हमें उल्लेख श्रीनन्दी सूत्र की स्थविरावली में मिलता है— **जेसिइमो अणुओगो पयरइ अज्जवि अड्ढभरहम्मि, बहुनयर निग्गयजसे ते वन्दे खंदिलायरिए। ततो हिमवन्त महन्त विक्कमे धिइ परक्कमणंते, सझायणंतधरे हिमवन्त वंदिमोसिरसा।। कलियसुय अणुओगस्स धारए धारए व पुव्वणं, हिमवन्त खमासमणे वन्दे णागज्जुणापरिए।।**

आचार्य हेमवन्तसूरि आर्य स्कन्दिल के पट्टधर थे। अतः इतिहास के लिए प्रस्तुत पट्टावली बड़ी उपयोगी है। इसमें वर्णित घटनाओं की पुष्टि खारवेल के शिलालेख के वर्णन से होती है।

जसभद्दो मुणि पवरो, तप्पयसोहंकरो परो जाओ।
अट्ठमणंदोमगहे, रज्जंकुणइ तयाअइलोही।।

सुट्ठिय सुपडिवुद्धे, अज्जे दुन्ने वि ते नमंसामि।
भिक्खुराय-कलिंगा-हिवेण सम्माणिए जिट्ठे।।

—हेमवन्त पट्टावली वीर निर्वाण संवत् और जैनकाल गणना पृष्ठ 162

2) हाथीगुंफा के शिलालेख में श्री जायसवालजी के वाचन के अनुसार अंगशास्त्रों के उद्धार से सम्बन्धित केवल इतना ही उल्लेख है कि– मौर्यकाल में विच्छिन्न हुए 64 अध्याय वाले अंगसप्तिक का चौथा भाग फिर से तैयार करवाया।

मुरियकाले वोछिंने च चोयठिसतिकंतरिये उपादयति

जबकि हिमवन्त स्थविरावली में अंग-शास्त्रों के उद्धार के सम्बन्ध में स्पष्ट उल्लेख के साथ-साथ यह भी बताया गया है कि कुमारगिरि पर खारवेल द्वारा आयोजित उस चतुर्विध संघ के सम्मेलन में किन-किन श्रमणों, श्रमणियों, श्रावकों और श्राविकाओं ने भाग लिया तथा खारवेल की प्रार्थना पर श्रमणों ने अवशिष्ट जिन प्रवचन को भोजपत्र, ताड़पत्र आदि पर लिखा।

3) इस शिलालेख की सातवीं तथा आठवीं पंक्ति में लिखा है खारवेल ने अपने राज्य के आठवें वर्ष में एक बहुत बड़ी सेना के साथ गोरखगिरि पर कब्जा कर राजगृह को घेर लिया था। खारवेल के शौर्य के भय से यवनराज डिमिट्रियस मथुरा का घेरा उठाकर अपने देश वापिस लौट गया। इसके बाद मगध पर दूसरा आक्रमण उसने अपने राज्य के बारहवें वर्ष में किया। और मगधपति पुष्यमित्र अपरनाम वृहस्पति मित्र को पराजित कर कलिंग जिन मूर्ति को जिसे नंदराजा कलिंग से पाटलीपुत्र में लाये थे उनको पुनः कलिंग में ले जाकर स्थापित किया। शिलालेख और स्थविरावली दोनों से यह निष्कर्ष निकलता है कि खारवेल

ने उत्तरापथ से दक्षिणापथ तक अपना राज्य और प्रभुत्व का विस्तार किया। खारवेल के हाथीगुंफा शिलालेख के अलावा और भी शिलालेख कलिंग की पहाड़ियों में मिले हैं।

खुला जिले में एक पहाड़ी भुवनेश्वर से 3 मील उत्तर में है। यह पर्वत तीन विभागों में विभाजित है अर्थात् खण्डगिरि, उदयगिरि और नीलगिरि। खण्डगिरि 123 फुट ऊंचा तथा उदयगिरि 110 फुट ऊंचा है। मुख्य गुफायें उदयगिरि में 44, खण्डगिरि में 19 तथा नीलगिरि में 3 हैं। इनके अलावा अनेकों छोटी-छोटी गुफाएं हैं।

उदयगिरि- उदयगिरि में जितनी गुफाएं है उनमें से सबसे बड़ी और सबसे उत्तम चित्रकारी से चित्रित **रानी हन्सपुरी गुफा** है। इस गुफा में बहुत से दृश्य अंकित हैं जिनमें कुछ नष्ट भी हो गये हैं फिर भी कुछ दृश्यों में स्पष्ट रूप से एक साधु की यात्रा को दिखलाते हैं जो धार्मिक उत्सव में नगर के भीतर चल रहे हैं लोग अपने घरों से उनका दर्शन कर रहे हैं। घोड़े जा रहे हैं, हाथी चल रहे हैं, प्यादे जा रहे हैं तथा स्त्री पुरुष हाथ जोड़े हुए साधु के पीछे जा रहे हैं। कहीं-कहीं खड़े हुए लोग झुक जाते हैं और फलादि चढ़ाते हैं तथा आशीर्वाद ले रहे हैं। इस पर्वत में श्रीपार्श्वनाथ स्वामी बहुत अधिक प्रतिष्ठित है। अन्य दूसरी गुफाएं है। जयविजयगुफा, छोटीहाथीगुफा, अलकापुरीगुफा, मच्छपुरीगुफा, पनसगुफा, पातालपुरीगुफा, बाघ गुफा और गणेश गुफा आदि।

मंचपुरी गुफा के 5 दरवाजे हैं– चौथे द्वार पर एक लाइन का शिलालेख है जो इस भांति है–

खरस महाराजस कलिङ्गाधिपतिनो महामेघवाहन सकूड़े पसीरिनोघलेनम्

अर्थात् चतुर महाराज कलिंग देश के स्वामी महामेघवाहन या कूड़े पसीरी की गुफा।

इस गुफा के सातवें कमरे में दूसरा लेख है जो इस भांति है—

कुमार वदुरवस लेनम् (यह लेख पहले से प्राचीन है) अर्थात् कुमार वदुरव की गुफा— शायद यह कुमार राजा खारवेल के पुत्र हो।

इस मञ्चपुरी गुफा में ऊपर के खाने में तीसरा लेख है जो इस तरह का है—

अरहन्त पसादायम् कलिङ्गानम् समनानम्लेनं कारितम् राज्ञोलालकस।

हथी साहस पपोतस् धुतुनाकलिंग चक्रवर्तितो श्री खारबेलस।

अग महिसिना कारितम् (यह लेख हाथी गुफा के लेख से कुछ पहले का है।)

अर्थात् यह श्रीअरहन्त के प्रासाद या मंदिर रूप गुफा कलिंग देश के श्रमणों के लिये बनाई गई है– यह गुफा कलिंग

चक्रवर्ती राजा खारवेल की मुख्य पटरानी द्वारा कराई गई जो राजा लालकस की पुत्री थी। यह लालकस, राजा हथीसहस के पौत्र थे। इसको स्वर्गपुरी गुफा भी कहते हैं।

गणेशगुफा- यहाँ भी कुछ दृश्य हैं जो श्री पार्श्वनाथ के चरित्र से सम्बन्ध रखते हों।

धानघर और हाथीगुफा- हाथी गुफा 50 फुट से 28 फुट है मुख 11 फुट ऊंचा है— भीतों पर कुछ शब्द अंकित हैं। प्रगट रूप से साधुओं या यतियों के नाम हैं। छतकी चट्टान पर 17 लाइन का लेख है 15 फुट से 6 फुट की माप है। यही प्रसिद्ध खारवेल का लेख है।

सर्पगुफा- इसके द्वार की बाईं ओर पहली शताब्दी पूर्व का एक शिलालेख है ये दो लाइन का है।

कम्मस हलरिन, 2. णय च पसादो।

अर्थात् कम्म और हलरिवन का प्रासाद। इसी सर्पगुफा द्वार पर बड़ी हाथीगुफा के पास एक शिलालेख है—**चूलसमय को था जे गाय** चूल कर्मन् का अजेय कोठा।

बाघगुफा- इस पर भी दूसरी शताब्दी का शिलालेख है जिनकी दो पंक्तियां इस प्रकार है—

नगरअरंबदस, 2. सभूतनोलेनम्- अर्थात् नगरजसभूति की गुफा।

हरिदासगुफा- इस पर एक शिलालेख इस भांति है- और यह ईस्वी सन् पहली शताब्दी पूर्व का है—

चूलकुमसपसातोकथाजेयाच। अर्थात् चूलकुम का प्रासाद और अजेय कोठा।

जंबेश्वरगुफा- यहाँ एक शिलालेख मञ्चपुरी गुफा के समय का जो लेख ब्राह्मी अक्षरों में है। **महामदास वारियाय ना कियस लेनम्** अर्थात् महामद की स्त्री नाकियस की गुंफा।

छोटीहाथीगुफा- इस पर भी एक अपूर्व लेख हैं। **अगरिच.....सलेनम्।**

खण्डगिरि :

तत्त्वगुफा नं0 1- इसमें चित्र है तथा इसपर शिलालेख हैं- यह पहली शताब्दी पूर्व का है।

तत्त्वगुफा नं0 2- इसपर भी लेख है— **पद मुलिकस कुसु मास लेनम्** कुसुम सेवक की गुफा। खण्डगिरि के लेखों में यह सब से प्राचीन लेख है। (Oldest of all inscriptions in Khandgiri)

नवमुनिगुफा- इसके भीतर 10वीं शताब्दी का लेख है जो इस भाँति हैं—

1. ऊँ श्रीमत् उद्योतकेशरीदेवस्य प्रवर्द्धमाने विजय राज्ये संवत् 18

2. श्रीआय्यंसंघप्रतिबद्ध ग्रहगुलबिनिर्गतदेशीगणाचार्य्य श्रीकुलचन्द्र

3. भट्टारकस्यतस्यशिष्यशुभचन्द्रस्य।

इस लेख में स्पष्ट लिखा है कि उद्योतकेशरीदेव के उन्नतिशील राज्य के 18वें वर्ष में श्री शुभचन्द्र आचार्य यहाँ विराजित थे जो श्री आर्य्यसंघगृहकुलदेशीगण के आचार्य कुलचन्द्र भट्टारक के शिष्य थे।

इसी गुफा में टूटी हुई भीत पर दूसरा शिलालेख इसी समय का है, जिसके वाक्य ये हैं–

ऊं श्री आचार्य्य कुलचन्द्रस्य तस्य शिष्यरवल्लशुभचन्द्रस्य.....छात्र विजो

इससे भी शुभचन्द्र आचार्य्य का नाम प्रगट है— इस गुफा के दाहिने कमरे में एक फुट ऊँची दस तीर्थंकरों की मूर्तियाँ है तथा उनमें शासनदेवी बनी हुई है। श्रीपार्श्वनाथजी की दो मूर्तियां हैं। जिनके ऊपर सर्पफणमण्डप किये हुए हैं- - उनकी विशेष मान्यता प्रगट है और इस गुफा के आगे

बारहभुजागुफा- इसका नाम बारह भुजा इसलिये है क्योंकि बरामदे की दीवार के बाई तरफ एक देवी की मूर्ति है जिसके बारह भुजायें हैं।

बरामदे से होकर तीन द्वार वाले लम्बे कमरे में जाना होता है ये द्वार अब गिर गये हैं छत की रक्षा अब दो नये स्तम्भ देकर की गई है। भीतों पर पद्मासन तीर्थंकर की मूर्तियाँ देवी सहित अंकित हैं। पीछे की तरफ श्री पार्श्वनाथ की बड़ी खड़गासन मूर्ति है। जिसपर 7 फल का मण्डप है इस पर देवी का चिन्ह अंकित नहीं है- इन सब मूर्तियों के भिन्न-भिन्न चिन्ह दिये हुए हैं। इसी के पास दक्षिण में—

त्रिशूलगुफा है- जिसका कमरा 22 फुट लम्बा 7 फुट चौड़ा व 8 फुट ऊंचा है। इसमें भी 24 तीर्थंकरों की मूर्तियां अंकित हैं। इन्हीं में 7 फण मण्डप सहित श्री पार्श्वनाथजी की खड़गासन मूर्ति तथा अन्त में श्री महावीर स्वामी की मूर्ति है। इन 24 तीर्थंकरों के समुदाय में भी श्री पार्श्वनाथजी को श्री महावीर स्वामी के पहले न देकर मध्य में विराजित किया है। (अर्थात् इससे यह सिद्ध होता है कि श्री पार्श्वनाथजी की विशेष भक्ति को दर्शाने वाली यह गुफा है । यह भी सम्भव है कि ये मूर्तियाँ श्री पार्श्वनाथजी के निर्वाण के बाद और महावीर स्वामी के निर्वाण के पहले विराजमान की गई हो।

पन्द्रहवें तीर्थंकर का आसन एक वेदी से ढका हुआ है जिस पर तीन पद्मासन सुन्दर मूर्तियाँ श्री पार्श्वनाथ भगवान की है इस गुफा की मूर्तियों का आकार पहले की गुफाओं की मूर्तियों के आकार से सुन्दर है। बाई तरफ वहाँ से आने से 50 या 60 फुट ऊँचा देखने से वहाँ जैन मूर्तियाँ अंकित दिखाई देती हैं—

पश्चिम की तरफ 2 खण्ड की गुफा है- इसको सिंहगुफा या ललतेन्दुकेसरीगुफा कहते हैं। पहले खण्ड के कमरे में जैन तीर्थंकर की मूर्तियाँ अंकित हैं– जिनमें सबसे मुख्य श्री पार्श्वनाथ की है उसमें एक शिलालेख भी अंकित है—

1. ऊँ-श्रीउद्योतकेसरीविजयराज्य संवत् 5।, 2. श्रीकुमारपर्वत स्थाने जीर्ण वापि जीर्ण इसान।,

3. उद्योतित तस्मिन् थाने चतुर्विंशति तीर्थंकर।, 4. स्थापिता प्रतिष्ठा काले हरि ओप जसनंदिकं।, 5. क्ष....हु....ति....दुथा.....।, 6. श्री पार्श्वनाथस्य कर्मक्षयाय।

(**नोट :** इस लेख में राजा उद्योतकेशरी का नाम व संवत् 5 आया है तथा खण्डगिरि का नाम कुमार पर्वत लिखा है– यहाँ जीर्ण मंदिर व बापी पहले थे ऐसा मालूम पड़ता है–वहीं 24 तीर्थंकर स्थापित किये गये। प्रतिष्ठा के समय में यहाँ श्री बसनन्दिआचार्य मौजूद थे) इसके आगे एक झील है जिसको आकाश गंगा कहते हैं—

अनन्तगुफा- खंडगिरि की दाहिनी तरफ एक लम्बा कमरा है, जो 23 फुट चौड़ा व 24 फुट लम्बा व 6 फुट ऊंचा है, चार द्वार हैं। पीछे की भीत पर 7 पवित्र चित्र अंकित हैं। उनमें स्वस्तिक, त्रिशूल, आदि हैं- यहाँ लेख ई० सन् से पहले के हैं।

दोहद समनानम् लेनम् दोहद के साधुओं की गुफा तथा दंडाचार अर्थ समझ में नहीं आया।

अम्बिका गुफा :- इसमें शासन अम्बिका की प्रतिमा है।

एक दूसरी गुफा में 5 पंक्ति का लेख है।

1. श्रीशान्तिकर सौराज्याद आचन्द्रार्कम्।, 2. गुहे गुहे खदि ? संझे पुनः अंगे-भाग।, 3. जास्य बिरजे जने इज्या गर्भ समुद्।, 4. भूतो नन्नं तस्य सुतो भिषक भीमतो।, 5. याचते वान्य प्रस्थम् सम्वत् सरात् पुनः।

(नोट : इस लेख में जो शिलालेखों की नकल दी गई है वह एपिग्रेफिका इन्डिया की जिल्द तेरहवीं सन् 1915-16 सफा 159 से 166 तक से ली गई है।)

उपरोक्त शिलालेखों से इतना पता तो सहज ही में लग जाता है कि खण्डगिरि उदयगिरि का नाम 10वीं तथा 11वीं शताब्दी तक **कुमार कुमारी पर्वत** प्रसिद्ध था। त्रिशूल गुफा के ऊपर एक सफेद पुता हुआ जिनमन्दिर हैं जिसका समय निश्चित नहीं है– यहाँ से दक्षिण की तरफ पत्थर की चट्टान के ऊपर जैन तीर्थंकरों की कई मूर्तियां अंकित है जो इधर-उधर पत्थरों के गिरने से साफ एवं प्रगट मालूम नहीं होती हैं– यहाँ पर भी एक गुफा थी जिसमें भी जैनतीर्थंकरों की मूर्तियाँ थी–पर्वत की चट्टान के मध्य में एक जैन मंदिर है जिसमें पाँच जैन मूर्तियां हैं।

खंडगिरि के दक्षिण पश्चिम में नीलगिरि है– यहाँ **राधाकुंड और श्यामकुंड हैं।**

इन गुफाओं में से हाथीगुफा के लेख ईस्वी सन् से 158 या 153 वर्ष पहले के हैं— तथा उदयगिरि की स्वर्गपुरी, मञ्चपुरी, सर्पगुफा, बाघगुफा, जाम्बेश्वर, हरिदास, ऐसी 6 गुफाओं में तथा खण्डगिरि की तत्वगुफा दो और अनंतगुफा इस तरह 9 गुफाओं में शिलालेख ब्राह्मी अक्षरों में हैं तथा ये गुफाएं हाथीगुफा के आस पास के समय में ही खोदी गई थी। यह भी सम्भव है, उनमें से कुछ दूसरी

गुफाएं हाथीगुफा से भी पहले की हो क्योंकि राजा खारवेल ने अपने बड़े लेख के अंकित करने को यह पहाड़ी इसीलिए चुनी होगी क्योंकि यहाँ जैनसाधुओं की स्वाभाविक या कृत्रिम गुफाओं में जैन साधु अवश्य पहले से ही विराजते होंगे।

कुछ विद्वानों ने इसे बौद्ध मूर्तियां बताया है जो कि विभ्रान्त करने वाला है।

"The Orissa caves have already been referred to, as they were long mistaken as a group of Buddhist excavations. They are probably as old as anything of the kind in India and, unless some of the Bihar excavations were Jaina, they are the earliest caves of the east sect."

The whole style of the architecture and sculpture in the older caves here points to a period quite as early as that of the Sanchi gateways and the small vihara at Bhaja, and we cannot be far wrong in ascribing most of them at least to the 2nd century before our era. Nor is any trace of Buddhism found among them. A History of Indian and eastern architecture

--James fergusson

फरग्यूसन के इस उल्लेख से यह और भी स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय इतिहासकार तथ्यों का सही आंकलन

करने में असफल हुए हैं उन्होंने अनेक स्थानों पर खुदाई से प्राप्त जैन मूर्तियों को बौद्ध मूर्ति बताकर गुमराह किया है।

हाथीगुंफा शिलालेख को सर्वप्रथम अट्ठारह सौ बीस ईसवीं में पादरी स्टलिंग ने देखा था। असुरक्षा के कारण लेख जर्जर अवस्था में था। करीब सौ वर्षों के प्रयत्न के बाद सन् उन्नीस सौ अट्ठारह में यह पढ़ा गया। इसमें नवकार मंत्र की पंक्तियाँ मिलने के बाद यह निश्चित किया गया कि यह लेख कलिंगाधिपति महामेघवाहन राजा खारवेल जो जैन थे उनका है। यह शिलालेख पन्द्रह फुट के करीब लम्बा और पाँच फुट चौड़ा है। इसमें सत्रह पक्तियाँ खुदी हुई है जो खारवेल के जैन होने का सशक्त प्रमाण देती है। इस शिलालेख में अनेक जैन प्रतीक बने है जिनमें स्वस्तिक, नंदावर्त, चैत्यवृक्ष आदि हैं।

हाथी गुम्फा शिलालेख :

1. **नमो अराहंतानं (।) नमो सवसिधानं (।) एरेण महाराजेन महामेघवाहनेन चेतराज वसवधनेन पसथसुभलखनेन चतुरंतलुठतगुणउेपहितेन कलिंगाधिपतिना सिरि खारवेलेन।**

अनुवाद : अरिहन्तों को नमस्कार, सिद्धों को नमस्कार, ऐर (ऐल) महाराजा महामेघवाहन (मरेन्द्र) चेदिराजवंशवर्धन, प्रशस्त, शुभ लक्षण युक्त, चतुरन्त व्यापि गुण युक्त कलिंगाधिपति श्री खारवेल ने।

2. पंदरसवसानि सिरि-कडार-सरीरवता कीडिता कुमारकीडिका (।) ततो लेखरूपगणना ववहार-विधिविसारदेन सवविजावदातेन नववसानि योवरजं पसासितं (।) संपुण-चतु-वीसति-वसो तदानि वर्धमान सेसयो वेनाभि-विजयो ततिये।

अनुवाद : पन्द्रह वर्ष पर्यन्त श्री कडार (गौर वर्ण युक्त) शारीरिक स्वरूप वाले नेवाल्यावस्था की क्रीड़ाएं की। इसके पीछे लेख्य (सरकारी फरियाद नामा आदि) रूप (टंकशाल) गणित (राज्य की आय व्यय तथा हिसाब) व्यवहार (नियमोपनियम) और विधि (धर्म शास्त्र आदि) विषयों में विशारद हो सर्व विद्यावदात (सर्व विद्याओं में प्रबुद्ध) ऐसे (उन्होंने) नौ वर्ष पर्यन्त युवराज पद पर रहकर शासन का कार्य किया। उस समय पूर्ण चौबीस वर्ष की आयु में जोकि बालवय से वधमान और जो अभिविजय में वेन (राज) है ऐसे वह तीसरे।

3. **कलिंगराजवसे-पुरिसयुगे महाराजाभिसेचनं पापुनाति (।) अभिसितमतो च पधमवसे बात-विहतगोपुर-पाकार-निवेसनं पटिसंखारयति कलिंगनगरि (ि) खवीर-इसि-ताल-तडाग-पाडियो च बंधापयति (।) सवुयानपटिसंठपनं च।**

अनुवाद : पुरुष युग में (तीसरी पुश्त में) कलिंग के राज्यवंश में राज्याभिषेक पाये। अभिषेक होने के पश्चात् प्रथम वर्ष में प्रबल वायु उपद्रव से टूटे हुए दरवाजे वाले किले का जीर्णोद्धार कराया। राजधानी कलिंगनगर में ऋषि खिबीर के तालाब और किनारे बँधवाए। सब बगीचों की मरम्मत।

4. **कारयति (।।) पनतीसाहि सतसहसेहि पकतियो च रंजयति (।) दुतिये च वसे अचितयिता सातकंणि पछिमदिसं हय-गज-नर-रथ-बहुलं दंडं पठापयति (।) कन्हरेणां गताय च सेनाय वितासिति असिकनगरं (।) ततिये पुन वसे।**

अनुवाद : करवाइ। पैंतीस लाख प्रकृति (प्रज्ञा) का रंजन किया। दूसरे वर्ष में सातंकणि (सातंकणि) की किंचित भी परवाह न करके पश्चिम दिशा में चढ़ाई करने को घोड़े हाथी, रथ और पैदल सहित बड़ा सेना भेजी। कन्हवेनों (कृष्णवेणा) नदी पर पहुँची हुई सेना से मुसिकभूषिका नगर को त्रास पहुँचाया।

5. **गंधव-वेदबुधो दंप-नत-गीतवादित संदसनाहि उत्सव-समाज कारापनाहि च कीडापयति नगरिं (।) तथा चवुथे वसे विजाधराधिवासं अहत-पुवं कालिंग पुवराजनिवेसितं.....वितध मकुटसबिलमढिते च निखित छत।**

अनुवाद : और तीसरे वर्ष में गंधर्व वेद के पंडित ऐसे (उन्होंने) दंप (डफ?) नृत्य, गीत, वांजेन्द्र के संदर्शन (तमाशे) आदि से उत्सव समाज (नाटक, कुश्ती आदि) करवा कर नगर को खेलाया; और चौथे वर्ष में विद्याधराधिवासे को केगिस को कलिंग के पूर्ववर्ती राजाओं ने बनवाया था और जो पहले कभी भी पढ़ा नहीं था। अर्हत पूर्व का अर्थ नया चढ़ाकर यह भी होता है..... जिसके मुकुट व्यर्थ हो गये हैं। जिनके कवच बख्तर आदि काटकर दो टुकड़े कर दिये गये हैं, जिनके छत्र काटकर उड़ा दिये गये हैं।

6. **भिंगारे हित-रतन-सापतेये सवरठिक भोजके पादे वंदापयति (।) पंचमे च दानी वसे नंदराज-तिवस-सत-ओघाटितं तनसुलिय-वाटा पनाडिं नगरि पवेस (ति) (।) सो.....भिसितो च राजसुयं (0) संदंसयं तो सरकरण**

अनुवाद : और जिनके शृंगार (राजकीय चिन्ह, सोने चांदी के लोटे झारी) फेंक दिये गए हैं, जिनके रत्न और स्वापतेय (धन) छीन लिया गया है ऐसे सब राष्ट्रीय भोजकों को अपने चरणों में झुकाया, अब पांचवें वर्ष में नन्दराज्य के एक सौ और तीसरे वर्ष (संवत्) में खुदी हुई नहर को तनसुलिय के रस्ते राजधानी के अन्दर ले आए। अभिषेक छटवें वर्ष राजसूय यज्ञ के उजवते हुए। महसूल के सब रुपये

7. **अनुगह अनेकानि सतसहसानि विसजति पोरं जानपदं (।) सतमं च वसे पसाससो वजि-रघरवी तिघुसित-घरिनीस (-मतुकपद-पुंना (सि? कुमार)..... (।) अठमे च वसेगरति सेना महत गोरधगिरि।**

अनुवाद : माफ किये वैसे ही अनेक लाखों अनुग्रहों पौर जनपद को वक्खशी दिए। सातवें वर्ष में राज्य करते आपकी महारानी बज्रधर वाली धूषिता (Demetrios) ने मातृपदे को प्राप्त किया (1) (कुमार 1)..... आठवें वर्ष में महा अ अ अ सेना ..... गोरधगिरि।

8. **वीं तपाघा) यिता राजगहं उपपीडापयति (।) एतिनं च कंमापदान-संनादेन संबत-सेन-वाहने विपमुचिंतु मधुरं अपयातो**

यवनराज डिमित.....(मो ?) यछति (वि)..... पलव.....

अनुवाद : को तोड़ करके राजगृह (नगर) को घेर लिया जिसके कार्यों से अवदात (वीर कथाओं का संनाद से युनानी राजा (यवन राजा) डिमित (..... अपनी सेना और छकड़े एकत्र कर मथुरा में छोड़ के पीछा लौट गया..... नौवें वर्ष में (वह श्री खारवेल ने) दिये हैं..... पल्लव पूर्ण।

9. **कपरुखे हय-गज-रध-सह-यति सवधरावास-परिवेसने स-अगिणठिया (।) सव-गहनं च कारयितुं बम्हणांनं जातिं परिहारं ददाति (।) अरहतो.....नवमेच बंये**

अनुवाद : कल्पवृक्षो! अश्व हस्ती रथों (उनको) चलाने वालों के साथ वैसे ही मकानों और शालाओं अग्निकुण्डों के साथ यह सब स्वीकार करने के लिए ब्राह्मणों को जो जागीरें भी दी अर्हत का.....

10. **(का). ि मान (ति) . रा (ज)-संनिवासं महाविजयं पासादं कार (ति) अठतिसाय सतसहसेहि (।) दसमे च वसे दंड-संधी-साम (मयो) भरध-बस-पठानं महि-जयनं ति कारा पयति एकादसमे चवसे धायातानं च मनिरतना (नि) उपलभते (।)**

अनुवाद : राजभवन रूप महाविजय (नाम का) प्रासाद उसने अड़तीस लाख (पण) से बनवाया। दसवें वर्ष में दंड, संधी साम प्रधान (उसने) भूमि विजय करने के लिये भारतवर्ष

में प्रस्थान किया.....जिनके ऊपर (आपने) चढ़ाई करी उनसे मणिरत्न वगैरह प्राप्त किये।

11. **कलिंग पुवराज निवेसितं पीथुड गदभ-नंगलेन कासयति (ि) जनपद भावनं च तेरसवससतकत (ं) तु भिदति ततोमरदेह-संघातं (।) वारसमे च वसे.....हस....के.ज. सवसेहि वितासयति उतरापथ-राजानी....**

अनुवाद : (ग्यारहवें वर्ष में) (किसी) बुगराजा ने बनवाया मेड (मडिलाबाजार) को बड़े गदहों से हलसे खुदवा दिया, लोगों को धोखाबाजी से ठगने वाले 113 वर्ष के समर का देहसंधान को तोड़ दिया। बाहरवें वर्ष में.....री उत्तरापथ में राजाओं को बहुत दुःख दिया।

12. **.....मगधानं च विपुलं भयं जनेतो हथसं गंगाय (ं) पाययति (।) मागधं च राजानं वहसतिमितं पादे वंदापयति (।) नंदराज-नीतं च कालिंगजिनं संनिवेसं.....गह-रतनान पडिहारेहि अंगमागध-बसुं च नेयाति (।)**

अनुवाद : और मगध वासियों को बड़ा भारी भय उत्पन्न करते हुए हस्तियों को सुगंग (प्रासाद) तक ले गया और मगधाधिपति वृहस्पति को अपने चरणों में झुकाया तथा राजानन्द दास ले गई कलिंग जिन मूर्ति को और गृहरत्नों को लेकर प्रतिहारों द्वारा अंग मगध का धन ले आया।

13. **.....तु (ं) जठर लखिल-गोपुरानी सिहरानि नीवेसयति सत-विसिकनं परिहारेन ।) अभुतमछरियं च हाथि-**

नावत परीहर हय-हथी-रतन (मा) निकं पंडराजा एदानि अनेकानि मुतमणिरतनानि अहरापयति इध सतस।

अनुवाद : अन्दर से लिखा (खुदे हुए) सुन्दर शिखरों को बनवाया और साथ में सौ कारीगरों को जागीरें दीं अद्भुत और आश्चर्य (हो ऐसी रीति से) हाथियों के भरे हुए जहाज नजराना हो। हस्ती रत्न माणिक्य, पाडयराज के यहाँ से इस समय अनेक मोती मानिक रत्न लूट करके लाये ऐसे वह शक्स (लायक महाराजा)।

14. **दणिणापथसिनो वसीकरोति (।) तेरसमे च वसे मुपवत-विजयचक-कुमारीपवते अरहिते य (?) प-खीण-संसितेहि कायनिसीदीयाय याप-ञावकेहि राजभितिमं चिनवतानि वसासितानं (।) पूजाय रत-उवासग-खारवेल-सिरिना जीवदेह-सायिका परिखिता (।)**

अनुवाद : सब को वश किये। तेरहवें वर्ष में पवित्र कुमारी पर्वत के ऊपर जहाँ (जैन धर्म का) विजय धर्म चक्र सुप्रवृत्तमान है। प्रक्षीण संसृति (जन्म मरणों को नष्ट किये) काय निषीदी (स्तूप) ऊपर (रहने वाले) पाप को बताने वाले (पाप ज्ञापकों) के लिये व्रत पूरे हो गये पश्चात् मिलने वाले राज (विभूतियाँ कायम कर दीं। (शासनों बन्ध दिये) पूजा में रक्त उपासक खारवेल ने जीव और शरीर की–श्री परीक्षा करली (जीव और शरीर परीक्षा कर ली है।

15. **(सु) सकतसमणसुविहितानं (नुं-1) च सव-दिसानं**

(नु-1) यतिनं तपस-इसिनं संघायनं (नुं 1) (;) अरहत-निसीदिया समीपे पभारे बराकर-समुथपिताहि अनेक योजनाहिताहि पनतिसाहि.....सतसह सिलाहि सिंहपथ-रानिसि (ं) धुडाय निसयानि।

अनुवाद : सुकृति श्रमणे सुविहित शत दिशाओं के ज्ञानी-तपस्वी ऋषि संघ के लोगों को..... अरिहंत के निषीहीका पास पहाड़ के ऊपर उन खदानों के अन्दर से निकाल के लाये हुए–अनेक योजनों से लाये हुए....सिंह प्रस्थवाली रानी सिन्धुला के लिए निःश्रय.....

16. **पटलिक चतरे व वेडूरियगभे थंभे पतिठापयति, (,) पान-तरिया सत सहसेहि (।) मुरिय-काल वोछिंनं च चोयठिअंग-सतिकं तुरियं उपादयति (।) खेमराजा स बढ राजा स भिखुराजा धमराजा पसंतो सुनंतो अनुभवंतो कलाणानि**

अनुवादः घंटा संयुक्त (⋯) वैडुर्य रत्न वाले चार स्तम्भ स्थापित किये। पचहत्तर लाख के व्यय से मौर्यकाल में उच्छेदित हुए चौसठ (चौसठ अध्याय वाले) अंग सप्तिकों का चौथा भाग पुनः तैयार करवाया। यह खेमराज वृद्धराज भिक्षुराज धर्मराज कल्यान को देखते और अनुभव करते।

17. **.....गुण-विसेस-कुसलो सब-पांसडपूजको सब-देवायतनसंकारकारको (अ) पतिहत चकिवाहिनिबलो चकधुरी गुतचको पवत-चको राजसि-वस-कुलविनिश्रितो महा-विजयो राजा खारवेल-सिरि**

अनुवाद : छ गुण विशेष कुशल मर्व पंथो का आदर करने वाला सर्व (प्रकार के) मन्दिरों की मरम्मत करने वाला अस्खलित रथ और सेता वाला चक्र (राज्य) के धुरा (नेता) गुप्त (रक्षित) चक्र वाला प्रवृतचक्रवाला राजर्षि वश विनिःसृत राजा खारवेल।

उपरोक्त शिलालेख का विशेषार्थ : चैत्र (चेटक) वंशीय राजाओं में खारवेल सबसे श्रेष्ठ और पराक्रमी राजा हुए। वंश परम्परानुसार खारवेल भी **ऐर महामेघ-वाहन** की उपाधि से भूषित हुए थे, सन् ईस्वी 197 वर्ष पूर्व में इनका जन्म हुआ था। पन्द्रह वर्ष तक इनका बाल्य जीवन क्रीड़ा में व्यतीत हुआ। सन् ईस्वी से 182 वर्ष पूर्व याने अपने 15 वर्ष में खारवेल युवराज पद पर नियुक्त हुए। अनुमान होता है कि इनके पिता वृद्ध अथवा रोग ग्रस्त होने के कारण राज्य चलाने में अक्षम थे इसी कारण खारवेल को उन्होंने युवराज पद देकर संपूर्ण राज्य भार उनके हाथ में सौंपा और तब से ही राज्य भार खारवेल के हाथ में था। युवराज होने के बाद राजा खारवेल को राजधर्म की शिक्षा दी गई।

सम्राट खारवेल के विषय में इतिहासकार रमेश चन्द्र मजूमदार ने लिखा है—

खारवेल कोरा विजेता ही न था। वह सुशासक और शान्तिकालीन कलाओं में भी दक्ष था। वह स्वयं एक अच्छा संगीतज्ञ था और नृत्य-समारोहों जैसे मनोरंजक आयोजनों द्वारा लोकरंजन करता था। उसने सिचाई एवं अन्य जनोपयोगी

कार्यों पर बहुत धन व्यय किया था। वह एक बहुत बड़ा निर्माता भी था तथा उसने राजधानी को उपवनों, तोरणीं और भवनों से सुसज्जित किया था। नगर के बीच उसका विशाल महाविजय-प्रासाद था। वह कट्टर जैन था। मगध और अंग से लूट के रूप में वह उन जैन मूर्तियों को ले गया जिन्हें कलिंग से कोई नन्दराज उठा ले आया था। खारवेल ने कुमारी पर्वत (खण्डगिरि) में अनेक गुफाएँ बनवायी और संभवतः उसके आसपास ही एक विहार भी बनवाया था।

– R.C. Majumdar

इस शिलालेख में खारवेल के राजत्व के तेरह वर्ष तक का वर्णन हमें मिलता है उसके बाद का नहीं। इसका क्या कारण है। अपने राजत्व के बारहवें वर्ष में उन्होंने समस्त उत्तरापथ को जीता था जिसमें काश्मीर शामिल था राजतरंगिनी जिसमें काश्मीर के इतिहास का वर्णन है वहाँ मेघवाहन का वर्णन हमें मिलता है। यह मेघवाहन भी जैनधर्मी थी जिसने काश्मीर में अहिंसा का प्रचार किया।

राजतरंगिनी में मेघवाहन के विषय में लिखा है—

अथोल्लसत्पृथुश्लाघमानिन्युर्मेघवाहनम्।
गान्धारविषयं गत्वा सचिवाधिष्ठिताः प्रजाः।।2।।

तस्याभिषेक एवाज्ञां धारयन्तोधिकारिणः
सर्वतोमारमर्यादापटहानुदघोषयन्।।5।।

कल्याणिना प्राणिवधे तेन राष्ट्रान्निवारिते।
निष्पापां प्रापिता वृत्तिं स्वकोशात्सौनिकादयः।।6।।

तस्य राज्ये जिनस्येव मारविद्वेषिणः प्रभोः
क्रतौ घृतपशुः पिष्टपशुर्भूतबलावभूत्।।7।।

देशैकदेशाल्लोर्नाम्नः प्राप्तस्तस्याः पितुर्गुरुः।
स्तुन्पा तद्भाषया प्रोक्तो लोस्तोन्पास्तूपकार्यकृत्।।10।।

चक्रे नडवने राज्ञो यूकदेव्यभिधा वधूः।
विहारमद्भुताकारं सपत्नीसपर्धयोद्यता।।11।।

अय ग्राहयितुं भूपानाज्ञां हिंसानिवृत्तये।
स दिग्जयाय निर्व्याजधर्मचर्यो विनिर्ययौ।।27।।

अभूदभीतजनतावेक्षणश्लाध्यविक्रमः।
स्पृहणीयो जनस्यापि तदीयविजयोद्यमः।।28।।

किरात कातरो मा भूः स्वयं संरक्ष्यते मया।
बहुबन्धुस्तव सुतो वध्योप्ययमबान्धवः।।39।।

उपाजिहीर्षुत्मानं दन्तद्योतार्धडम्बरैः।
अर्चयन्निव चामुण्डामथोवाच स पार्थिवः।।46।।

इत्युक्का स स्वयं देहमुपहर्तु समुद्यतः।
खण्डनाय स्वमुण्डस्य विकोशं शस्त्रमादधे।।50।।

ततः प्रहर्तुकामस्य तस्य द्युकुसुमैः शिरः।
करश्च दिव्यवपुषा रुद्धः केनाप्यजायत ।।51।।

अधापश्यत्तधाभूतः कंचिद्धिव्याकृतिं पुरः।
न चण्डिकां न तं वध्यं न किरातं न दारकम्।।52।।

तत्र तालीतरुवनच्छायाध्यासितसैनिकम्।
प्रीत्या लङ्काधिराजस्तमुपतस्थे विभीषणः।।73।।

अय रक्षःपतिर्लङ्कां नीत्वालंकरणं क्षितेः।
अमर्त्यसुलभाभिस्तं विभूतिभिरुपाचरत्।।75।।

रक्षःशिरःप्रतिच्छन्दैः स्थिरप्रणतिसूचकैः।
सनाथशिखरान्प्रदात्तस्मै रक्षःपतिर्ध्वजान।।77।।

पाराद्वारिनिधेः प्राप्ताः कश्मीरेष्वधुनापि ये।
राज्ञां यात्रासु निर्यान्ति ख्याताः पारध्वजाः पुरः।।78।।

इत्थमाराक्षसकुलं प्राणिहिंसां निषिध्य सः।
स्वमण्डलं प्रति कृती न्यवर्तत नराधिपः।।79।।

तंतः प्रभृति तस्याज्ञा सार्वभौमस्य भूपतेः।
हिंसाविरतिरूपा सा न कैश्चिदुदलङ्घ्यत।।80।।

क्षुद्रैरुध्रादिभिर्नाप्सु सिंहाद्यैर्गहने न च।
न श्येनप्रभुखैर्व्योम्नि तद्राज्ये जन्तवो हताः।।81।।

तस्मिन्नस्तंगते भुक्त्का क्ष्मां चतुस्त्रिंशतं समाः।
अनादित्यभिवाशेषं निरालोकमभूज्जगत्।।96।।

प्रजागण मंत्रियों के नेतृत्व में गांधार प्रदेश गये और मेघवाहन जिनकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैली हुई थी उनको काश्मीर में लेकर आये।

इस गुणी राजा ने अपने देश में जीव हत्या का निषेध करवा दिया और जो जीव हत्या से जीविका चलाते थे उनको बिना जीव हत्या किये जीवन निर्वाह के लिए राजकोष से धन दिया।

ये राजा जो जीव हत्या का जैनों की तरह घोर विरोधी था उसने यज्ञों में पशुबली के स्थान पर घी और मिष्ठान का व्यवहार प्रचलित करवाया।

उसकी रानी अमृत प्रभा ने अमृत भावना नामक विहार का भिक्षुओं के लिए निर्माण करवाया।

रानी के पिता के आध्यात्मिक गुरु जो विदेश से आये थे उन्होंने एक स्तूप का निर्माण करवाया।

उनकी दूसरी रानी युकादेवी ने अन्य रानियों से प्रतिस्पर्धा करते हुए नन्दन वन नामक अति सुन्दर विहार का निर्माण करवाया।

यह राजा इस जीव हत्या निषेध के पवित्र कानून के पालन के लिए सभी राज्यों में विजय पताका फहराने के लिए निकला जिससे वह जीव हत्या को बन्द कर सके।

उनकी विजय की आकांक्षा में जिसमें सिर्फ वीरता ही नहीं बल्कि लोगों की सुरक्षा करने की भावना भी थी।

जब उसकी सेना विश्राम कर रही थी तो लंका का राजा विभीषण मित्रता के लिए उसके पास आया।

तब विभीषण दैत्यों का राजा पृथ्वी के आभूषण रूप मेघवाहन को लंका ले गया।

पूरे दैत्य वंश यानि लंका के पूरे राज्य में जीव हत्या निषेध करवा कर वह गुणी सम्राट अपने राज्य में वापस आया।

उस समय से उसके आदेशानुसार पूरी पृथ्वी में जीव हत्या रोक दी गयी।

उसके शासन में स्थलचर, जलचर या वायुचर किसी भी प्रकार के जीव नहीं मारे जाते थे।

चौंतीस साल शासन के बाद जब राजा की मृत्यु हुई तो ऐसा लगा कि जैसे पूरा विश्व अंधकारमय हो गया।

मंचपुरी गुफा में जो शिलालेख है उसमें लिखा है कि ये गुफा चक्रवर्ती राजा खारवेल की मुख्य पटरानी ने बनायी है जो राजा लालकस की पुत्री थी और ये लालकस हाथीसहस के पौत्र थे किन्तु पटरानी का नाम नहीं लिखा हुआ है, ना ही यह स्पष्ट है कि राजा लालकस किस देश के राजा थे। पंडित नीलकण्ठ दास ने खारवेल के विवाह के विषय में एक पुस्तक लिखी है जिसमें खारवेल की पटरानी का नाम धूसी लिखा है। उसमें लिखा है कि फारस देश में जाने वाले कलिंग के व्यापारियों को सिंधु देश में बहुत कष्ट उठाना पड़ता था और बहुत सा धन दण्ड स्वरूप देना पड़ता था। राजा खारवेल ने इन व्यापारियों का कष्ट दूर करने के लिये अपनी सेना के साथ सिन्धु नदी के मुहाने के पास पड़ाव डाला। एक दिन घोड़े पर सवार होकर घूमने निकले, लौटते समय रास्ता भूल जाने पर उन्होंने देखा कि नदी किनारे कुछ बालिकाएं खेल रही है और धूसी एक तरफ बैठी हुई थी खारवेल ने धूसी के समीप जाकर उससे रास्ता पूछा, धूसी एक राजकन्या थी वह राजा को देखकर मोहित हो गयी और राजा भी धूसी को

देखकर मुग्ध हो गये। धूसी बाणविद्या में बहुत ही निपुण थी। वह वेश बदलकर सेना नायक के रूप में खारवेल के संग सिंहपथ चीन पर आक्रमण के समय थी। युद्ध में वीरतापूर्वक युद्ध करते हुए धूसी ने खारवेल की रक्षा की और युद्ध में खारवेल की विजय हुई। धूसी को पहचान कर और उनके साहसपूर्ण कार्यों के देखकर उन्होंने धूसी से विवाह कर लिया।

इस वर्णन से राजतरंगिनी में लिखित यह विवरण कि खारवेल को काश्मीर के राज्याधिकारियों द्वारा गांधार से काश्मीर में शासन हेतु लाया गया था इसकी भी पुष्टि होती है।

राजतरंगिनी में सिर्फ मेघवाहन का नहीं वरन् उसकी चार पीढ़ियों तक का वर्णन मिलता है। उनका प्रपौत्र उज्जैन के राजा विक्रमादित्य का समकालीन था। अपने राज्य के बारहवें वर्ष में महामेघवाहन ने उत्तरापथ में विजय प्राप्तकर काश्मीर में अपनी राज्य सत्ता स्थापित की थी। मेघवाहन के बारे में के. राधाकृष्ण मुखर्जी ने लिखा है– **काश्मीर ने सम्राट मेघवाहन जैसे दिग्विजयी सम्राट उत्पन्न किये जिसकी सैनिक वाहिनियों ने आधे विश्व को विजय किया और विजित प्रदेशों को एक शर्त में वापस किया कि वहाँ पर प्राणी हिंसा नहीं होगी।**

श्री नरेन्द्र सहगल मेघवाहन की प्रशंसा में लिखते हैं- **प्राणी रक्षा हेतु स्वयं की बलि को प्रस्तुत होने वाला मेघवाहन अपने आदर्शों से काश्मीर को ऊँचा उठा ले गया।** अहिंसा का ये उत्कृष्ट उदाहरण मेघवाहन की काश्मीर विजय तथा

उसके जिन धर्मी होने का सर्वश्रेष्ठ प्रमाण है। मेघवाहन परम अहिंसक और पशुबलि का सख्त विरोधी था। उसके शासन काल में उच्च कोटि की शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार भी हुआ। जिसका प्रभाव आज भी हमारी परम्परा में देखने को मिलता है। प्राचीन काल से काशी और काश्मीर दोनों ही प्रसिद्ध शिक्षा केन्द्र थे लेकिन काश्मीर का महत्त्व ज्यादा माना जाता था। ये आनन्द कौल के इन शब्दों से स्पष्ट होता है–

From the ancient times Kashmir and Kashi were famous for learning throughout the India. But Kashmir was ahead of Kashi. scholars of Kashi had to come to Kashmir for completing their studies. Even today the people of kashi during initiation of children of barning tell them to were the sacred thread and walk seven steps in the direction of Kashmir.

--Anand Kaul

खारवेल ने व्यक्ति के नैतिक चरित्र को उठाने के लिए जैन धर्म के मूल सिद्धान्तों का स्वयं तो पालन किया ही बल्कि जन-जन को भी उसका पालन करने के लिए प्रोत्साहित किया। फलस्वरूप काश्मीर की जनता में परम्परा से चले आ रहे उन आदर्शों की मान्यता आज भी किसी न किसी रूप में परिलक्षित होती है। जिसके कारण काश्मीर का एक विशेष स्थान है।

The Kashmir (India) has enriched the world ethics by its religious doctrines and principles of sober

qualities and deeds. with this recognition of the doctrines of deeds and the immortality of soul have recieved important place in the code of ethics.

--John Mecenze

खारवेल के बाद ओड़ीशा का इतिहास कुछ शताब्दी तक अंधकार में विलुप्त हो जाता है और इस अवधि के दौरान जैनधर्म की परिस्थिति का निर्धारण करना कठिन है। शिशुपाल गढ़ में खुदाई के दौरान महाराजा राजाधिराज धर्माधार का एक सोने का सिक्का प्राप्त हुआ है जो तीसरी शताब्दी का है तथा डॉ0 ए0 एस0 अलतेकर के अनुसार वह संभवतः मुरुंडवंश के एक जैन राजा थे जो खारवेल युग के बाद ओड़ीशा को नियंत्रित करते थे। मुरुंड जैनधर्म का अनुसरण करने वाले माने जाते थे। किन्तु खारवेल के पश्चात् धीरे-धीरे बौद्धधर्म लोगों में लोकप्रिय हो गया। दाठावंश से हम जानते हैं कि गुहाशिव (सी 400 ई0 स0) कलिंग का राजा था जिसने जैनधर्म से बौद्धधर्म स्वीकार किया और समस्त निर्ग्रन्थ जैनियों को कलिंग से प्रताड़ित कर दिया था। क्रमशः शैवसंप्रदाय की लोकप्रियता एवं वैष्णवभक्ति के प्रभाव से जैनधर्म के प्रभाव का ह्रास हुआ तथापि यह पूर्णतः समाप्त नहीं हुआ और सहिष्णु जनता द्वारा मूक समर्थन मिलता रहा जिसके कारण जैन-संस्कृति का दीप प्रज्ज्वलित होता रहा है। जैनधर्म के रत्नत्रयी उच्च आदर्श जैसे उचित श्रद्धा (सम्यकदर्शन), उचित ज्ञान (सम्यक ज्ञान) तथा उचित आचरण (सम्यक

चारित्र) लोगों को मोक्ष प्राप्ति की दिशा में प्रेरित करने में कभी भी असफल नहीं रहे।

सातवीं शताब्दी ईस्वी सन् में ह्वेन सांग ने कलिंग में जैनधर्म के प्रभाव को घोषित किया है तथा उसके अनुसार नास्तिकों में अधिकांश निर्ग्रन्थ थे। भारत में जैनियों के पवित्र जीवन ने उसका ध्यान आकर्षित किया था तथा उसने उल्लेख किया है कि निर्ग्रन्थ एवं उनके अनुयायी निर्वस्त्र घूमते थे इसलिए सबका ध्यान आकर्षित होता था। वे हिंसा द्वारा अपने केशों को उखाड़ देते थे, उनके शरीर का चर्म सूख जाता था एवं उनके पैर सख्त होते थे तथा शरीर सूखी हुई लकड़ी की भाँति दिखते थे, जो नदी के किनारे विचरण करते थे जिसे वे पुण्य कर्म मानते थे। बानपुर के शिलालेख में शैलोद्भव राजा धर्मराज (छठवीं-सातवीं शताब्दी ई० स०) के विषय में उल्लेख मिलता है कि उनकी रानी कल्याणदेवी ने जैन भिक्षु एकसाटा प्रबुद्धचन्द्र को धार्मिक उद्देश्य हेतु उपहार में भूमि प्रदान की थी। वे अर्हतचार्य नासिकचन्द्र के शिष्य थे तथा शब्द एकसाटा संभवतः यह संकेत करता है कि उन्होंने केवल एक वस्त्र धारण करने का संकल्प लिया था। इस दान से शैलोद्भवों की केवल धार्मिक सहिष्णुता ही प्रकट नहीं होती है अपितु इससे यह भी प्रकट होता है कि उस समय समाज में जैन आचार्यों का सम्मान था।

अनेकों उत्थान पतन के बावजूद खंडगिरि और उदयगिरि जैनधर्म के लोकप्रिय सांस्कृतिक केन्द्र रहे हैं। नवमुनि गुफा के

उद्योत केशरी (11वीं शताब्दी ई० स०) के एक शिलालेख में कुलचन्द्र के शिष्य के रूप में शुभचन्द्र का उल्लेख मिलता है जो आर्यसमूह के गृहकुल से संबंधित थे तथा देशीगण के माने जाते थे। कल्याणीचालुक्य तथा देवगिरि के यादव शिलालेखों में शुभचन्द्र तथा कुलचन्द्र जैन गुरुओं के रूप में वर्णित हैं। ललातेंदु केशरी गुफा के उद्योतकेशरी के एक अन्य अभिलेख में यह उल्लेख मिलता है। यशस्वी उद्योतकेशरी ने सुविख्यात कुमार पर्वत पर पाँच वर्ष तक विजयपूर्ण शासन किया था जहाँ विशीर्ण पुष्करों और विनष्ट मंदिरों का उसने जीर्णोद्धार किया और चौबीस तीर्थंकरों की प्रतिमा स्थापित की। सोमवसमी शासक दर्शनीय धार्मिक स्थल मुक्तेश्वर मंदिर के पुष्कर के निचले हिस्से की दीवारों के बाहरी ताखों पर अंकित किए जैन तीर्थंकरों के चित्रों से प्रभावित हुए थे जिसका निर्माण उनके शासनकाल में किया गया था। आगे बालासोर से प्राप्त अभिलेख में एक कुमारसेन का उल्लेख मिलता है जो 10वीं-11वीं शताब्दी ई० स० का जैन उपदेशक प्रतीत होता है। श्री नन्द के शिष्य उग्रदित्य द्वारा संस्कृत में संकलित काव्य **कल्याणकारक** को त्रिकलिंग देश के रत्नगिरि जैन मंदिर में उत्कीर्ण किया गया पाया गया है जिसमें कुमारसेन के साथ-साथ वीरसेन, सिद्धसेन, दशरथगुरु तथा पन्नास्वामी आदि के नाम उल्लिखित थे। ओड़ीशा के विभिन्न हिस्सों से प्राप्त किए गए जैन तीर्थंकरों की सुंदर मूर्तियों से यह ज्ञात होता है कि 8वीं और 11वीं शताब्दी में ओड़ीशा में व्यापक रूप से जैनधर्म का प्रभाव था और बहुत

संभव है कि इसका प्रादुर्भाव राष्ट्रकूटों के प्रभाव से हुआ था जो जैन धर्म के प्रबल संरक्षक थे। राष्ट्रकूट राजा गोविन्द तृतीय ने कोशल, कलिंग, बंग और ओड्रक पर विजय प्राप्त की थी। किन्तु ओड़ीशा में जैनधर्म की कीर्ति और प्रभाव नष्ट करने के लिए अनेक प्रयत्न किये गये। वैष्णव धर्म ने अपना प्रभुत्व कायम रखने के लिए जगन्नाथ मंदिर के ऐतिहासिक तथ्यों को नष्ट कर नई कहानियाँ गढ़ी परन्तु सत्य कभी न कभी सामने आता ही है। जगन्नाथ मंदिर के ऐतिहासिक तथ्यों से मंडलपांजी द्वारा यह सत्य उद्घाटित हुआ है कि 12वीं शताब्दी ई० स० की समाप्ति पर गंग राजा मदन महादेव द्वारा धवली, वानिबक्रेश्वर आदि उपत्यकाओं में जैन सिद्धों एवं बौद्धभिक्षुओं को सजा दी गई थी।

डॉ० लक्ष्मीनारायण साहू के मतानुसार उड़ीसा की जगन्नाथ संस्कृति पर भी श्रावक प्रभाव है। उड़ीसा के जगन्नाथ मन्दिर में कोइलि बैकुण्ठ है। यह कोइलिबैकुण्ठ श्रावक संस्कृति से जुड़े केवल्य शब्द से ही आया है कोइलि, ऐसा डॉ० नीलकण्ठ साहू का मत है।

जगन्नाथ ऋषभदेव के ही प्रतीक है इसके बहुत से प्रमाण है। पुरी और भुवनेश्वर में आषाढ़ शुक्ला द्वितीया को एवं चैत्र शुक्ला अष्टमी को रथ यात्रा निकलती है। श्रावक संस्कृति में भी आषाढ़ शुक्ला द्वितीया तीर्थंकर ऋषभ के गर्भ कल्याणक का शुभ लग्न है। उनके जन्म दिन पर ही रथ यात्रा का उत्सव होता है। तीर्थंकरों का गर्भ, जन्म, दीक्षा, ज्ञान प्राप्ति एवं मोक्ष प्राप्ति जिस तिथि को होती है

उन तिथि को उत्सव मनाते हैं। इन तिथियों में श्रावकगण चैत्ययात्रा कराते हैं। चैत्ययात्रा के साथ रथयात्रा का मेल है। इसमें चैत्य निर्माण कर उसमें जिनमूर्ति बैठाते हैं। फिर उसको लेकर नगर परिक्रमा देते हैं। इस प्रकार जगन्नाथ की रथ यात्रा जैन संस्कृति का ही प्रभाव दर्शाती है।

इसके अतिरिक्त उड़ीसा की शैव संस्कृति के क्रम विकास में भी श्रावक संस्कृति की कुछ देन है। भुवनेश्वर अंचल के बहुत से शिव मंदिर श्रावक शिल्पियों द्वारा निर्मित हुए हैं। इन सब मंदिरों के शीर्ष स्थान पर त्रिशूल है। त्रिशूल शैव संस्कृति से नहीं ऋषभनाथ संस्कृति से युक्त है।

उड़ीसा के लोक समाज में कल्पवृक्ष पूजा खूब जनप्रिय है। कहना नहीं होगा यह कल्पवृक्ष पूजा श्रावक संस्कृति से जुड़ी हुई है। उस समय की श्रावक संस्कृति बहुत से क्षेत्रों में भारतीय आर्य शिल्प संस्कृति के विकास का साधन बनी है। केवल उड़ीसा ही नहीं समस्त भारत की आर्य और अनार्य संस्कृति को श्रावक संस्कृति का अनुदान मिला है ऐसा डॉ० जी बुल्हर मानते हैं।

The characteristic feature of Jainism is it's claim to universality. It also declares its objects to be to lead all men to salvation and to open it's arms not only to the noble Aryans but also to the low born Sudra and even to the alien deeply despised in India as the Mlechha." -- G. Bulher.

जैनियों ने उड़ीसा के भाषा वैज्ञानिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी तथा जैनियों के अहिंसा का सिद्धान्त ओड़ीशा के लोक-कथा बाउल चरित एवं अन्य साहित्यिक विधा में स्थान पाया। ओड़ीसा के भागवत में ऋषभनाथ और उनके सौ पुत्रों के वार्तालाप से जैनधर्म के महान आदर्शों की जानकारी मिलती है जबकि सरलादास के ओड़ीया महाभारत में जनुघंट उपकथा (14-15वीं शताब्दी ई० स०) में यह वर्णन मिलता है कि राजा जनुघंट नग्नअवस्था में विचरण करते हुए अपने दैनिक भोजन की व्यवस्था भिक्षा रूप में करते थे जो निर्भ्रान्तरूप से जैन प्रभाव को स्थापित करता है। प्राचीन महात्म्य (सी० 18वीं शताब्दी ई० स०) के चित्रचंडाल उपकथा में भी जैनधर्म के प्रभाव को लक्षित किया जा सकता है।

बालेश्वर जिले के चम्पा ग्राम में शान्तिनाथ भगवान की एक सुन्दर मूर्ति है और आउषपुर में है भगवान ऋषभनाथ की मूर्ति। उड़ीसा के कटक में एक सुन्दर जैन मन्दिर है। यहाँ बहुत सी तीर्थंकर मूर्तियों में पार्श्वनाथ, ऋषभनाथ, महावीर, अजितनाथ आदि की मूर्त्तियाँ उल्लेख योग्य है। यहाँ ऋषभनाथ को शिवरूप में सजाकर पूजा करने की भी रीति है। क्यूंझर जिले के आनन्दपुर सब डिविजन से नौ मील दूर कोडसिडी ग्राम में सौ से भी अधिक तीर्थंकर मूर्ति, यक्ष-यक्षिणियों की मूर्त्तियाँ विक्षिप्त भाव में पड़ी हुई है। यह स्थान पहले तोषल राज्य के अन्तर्गत था। शायद यहीं अतीत का विख्यात् शैलपुर ग्राम था। यहाँ से प्राप्त श्रावक संस्कृति से जुड़ी ये सब शिल्प-कलाएँ मानो हमारे

कानों में अतीत की कथा कह जाती है। मानो ये पाषाण फलक पर रचित अतीत युग के इतिहास का एक-एक पृष्ठ है। बल्लभ भाई के शब्दों में हम कह सकते हैं।

The Jain architecture is nothing but a kind of history, that it is a standing and living record and it supplies us a more vivid and lasting picture of a nation than history does."

उड़ीसा के किसी-किसी पहाड़ी अंचल के आदिवासियों के मध्य कड़ा पद्मतोला गीत सुना जाता है। इन गीतों में भी श्रावक संस्कृति का प्रभाव है।

सरला महाभारत पर श्रावक संस्कृति का बहुत कुछ प्रभाव लगता है। इस ग्रन्थ के एक स्थान पर कहा गया है–

राधे चक्रे बूलू आछे सात ताल ऊचे।
ताले ऊपरे पटाल आछे जे सुसञ्चे।।

यहाँ राधा चक्र शब्द श्रावक संस्कृति से युक्त हरिवंश पुराण से लिया गया लगता है। संस्कृत महाभारत में राधा चक्र का सन्धान कहीं नहीं मिलता।

उड़ीसा के जगन्नाथ दास की भागवत में ऋषभनाथ की कथा है। इसके पंचम अध्याय में ऋषभदेव ने अपने सौ पुत्रों को जो उपदेश दिया है उस पर केवल श्रावक संस्कृति का प्रभाव ही नहीं बल्कि उसमें श्रावक संस्कृति को ही उजागर किया है जैसे—

श्री श्री ऋषभदेव उवाचः
भी पुत्र माने सावधान,
सुन है आमार वचन।
जे प्राणी जे कार्यमान,
निरत करे आचरण
से प्राणी व्यर्थ एई संसारे
पड़े नरक महाघोरे।

केवल जगन्नाथ दास की भागवत ही नहीं चैतन्यदास विरचित विष्णु गर्भ पुराण ग्रन्थ में भी ऋषभदेव और भरत का चरित्र है। इसमें भरतादि दस भाई ऋषभदेव से धर्म शिक्षा ग्रहण करते हैं।

प्रागैतिहासिक काल से उड़ीसा में ऋषभ संस्कृति का भी प्रभाव परिलक्षित होता है जो खारवेल के समय अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गया था। मेघवाहन खारवेल का निष्पक्ष रूप से सही मूल्यांकन किया जाय तो उसका विशाल साम्राज्य और अहिंसा की भावना इतनी उच्चकोटि की थी कि वह सम्राट अशोक से भी साम्राज्य की दृष्टि से और धार्मिक प्रभावना की दृष्टि से महान बन गया। भारतीय इतिहासकारों ने जो एकांगी विचारधारा के पोषक है खारवेल के इतिहास को धूमिल करने को हर संभव प्रयास किया। आदि संस्कृति को नष्ट करने के प्रयास में खारवेल को बौद्ध धर्मी तथा शैव भक्त दिखाने का प्रयास किया गया और आज भी किया जा रहा है। खारवेल और मेघवाहन दोनों उपाधि इस बात की

द्योतक है कि भारतीय ऐतिहासिक परम्परा में कोई भी सम्राट अहिंसा को इतनी ऊंचाई तक नहीं ले गया।

खारवेल के बाद अनेक पीढ़ियों तक काश्मीर के राजमहलों में जो ध्वजा फहराई जाती थी वह खारवेल को श्रीलंका के राजा ने प्रदान की थी और जब काश्मीर के राजा कहीं बाहर जाते थे तो ये ध्वजायें उनके आगे-आगे चलती थी। यह एक ज्वलंत उदाहरण है उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में श्रीलंका तक भारत की संगठनात्मक सांस्कृतिक एकता का।

संदर्भ ग्रन्थ :

1. Fergusson, James - History of Indian And Eastern Architecture Vol -II.
2. Ganguly, Dilip Kumar, History & Historians in Ancient India.
3. Kaul Anand, The Kashmiri Pandits.
4. Mahapatra, Harihar, Cultural Heritage of Orissa Institute of Oriental & Orissian studies. 1993
5. Mecenze John, Hindu Ethics.
6. Stein, M.A., Kalhan's Rajataragini Vol I-II, Motilal Banarsidas Publication Pvt Ltd. Delhi 1979
7. दुगड़, हीरालाल, मध्य एशिया और पंजाब में जैन धर्म, जैन प्राचीन साहित्य प्रकाशन मन्दिर दिल्ली।
8. मजुमदार, रमेशचन्द्र, प्राचीन भारत, मोतीलाल बनारसीदास।
9. साहू लक्ष्मी नारायण, उड़ीसा में जैन धर्म 1994

सम्राट खारवेल और उनकी रानी
उदयगिरि गुम्फा

साधुओं के रहने का निवास
उदयगिरि गुम्फा

हाथी गुम्फा

रानी गुम्फा

उदयगिरि खण्डगिरि गुम्फा

उदयगिरि खण्डगिरि गुम्फा

उदयगिरि खण्डगिरि गुम्फा

रानी गुम्फा

जैन साधु गुम्फा

खण्डगिरि गुम्फा

हाथी गुम्फा

उदयगिरि खण्डगिरि गुम्फा

उदयगिरि खण्डगिरि गुम्फा

अनन्त गुम्फा 2

बारहभुजा गुम्फा

उदयगिरि गुम्फा

उदयगिरि खण्डगिरि गुम्फा

सर्पमुख गुम्फा

नवमुनि गुम्फा

उदयगिरि खण्डगिरि गुम्फा

गणेश गुम्फा

उदयगिरि खण्डगिरि गुम्फा

उदयगिरि खण्डगिरि गुम्फा